राज एक्सप्रेस
11 मई 2010

आखिरकार विकास की कीमत किसी न किसी को तो चुकानी ही पड़ती है। मतलब...

आत्मघाती ही है परियोजनाओं पर रोक

यह कोई पहला मौका नहीं है, जब पर्यावरण मंत्रालय ने नर्मदा परियोजना का काम रोका था। यदि महेश्वर परियोजना की ही बात करें, तो इससे पहले सन-2001 में भी उसने इसका निर्माण रोक दिया था। तब तकरीबन पांच साल तक काम रुका रहा और इस बीच करोड़ों रुपए नुकसान बनकर नर्मदा में बह गए, पर नर्मदा बचाओ आंदोलन (नबआ) और सरकार में बैठे अधिकारियों को इससे कोई लेना-देना नहीं। उचित पुनर्वास के एक जुमले के आधार पर इस देश में न जाने कितनी परियोजनाओं को अरबों रुपए का घाटा लगा दिया गया। फिर भी, न सरकारों को, न आंदोलनकारियों को, न सामान्यजन को इस बारे में सोचना-विचारना है।

आखिरकार, हम कब समझेंगे कि विकास की कीमत किसी को तो चुकानी ही पड़ती है। हां, हर पीड़ित को उचित मुआवजा मिले, उसका ठीक से पुनर्वास हो। यह साझा चिंता होनी चाहिए, पर नर्मदा घाटी में स्थिति एकदम विपरीत है। यहां नर्मदा बचाओ आंदोलनकारियों ने न केवल परियोजनाओं में अत्यधिक विलंब करा दिया, बल्कि एक ओर जहां उनकी लागत बढ़वा दी, वहीं निमाड़-मालवा को मिलने वाली बिजली-पानी में भी अड़ंगा लगा दिया। नर्मदा घाटी में तीन प्रमुख परियोजनाएं हैं। पुनासा (जिसका नाम बाद में इंदिरा सागर हो गया), ओंकारेश्वर और महेश्वर। इनमें से सिर्फ इंदिरा सागर ही पूरी तरह से चालू है। बाकी दोनों में नर्मदा बचाओ आंदोलन ने अड़ंगे डाल रखे हैं। ओंकारेश्वर और महेश्वर, दोनों से प्रमुख रूप से बिजली मिलनी है, जबकि इंदिरा सागर से सिंचाई भी होनी है। महेश्वर से 400 मेगावाट बिजली मिलनी है। निश्चित ही यह बिजली पूरे प्रदेश के लिए है, पर बीते कई दशकों से इसकी सबसे ज्यादा जरूरत निमाड़ को है। शहरों के लोग सोच भी नहीं सकते कि बिजली की कितनी किल्लत गांवों में बनी हुई है।

वहां अब भी बमुश्किल 4-6 घंटे बिजली आती है। उस दरम्यान ग्रामीणों को पानी भी भरना है, चक्की में आटा भी पिसवाना है, इनवर्टर को चार्ज भी करना है, खेत में जहां सब्जी-भाजी उगा रखी है, उसे भी पानी देना है और ऐसे तमाम काम कर लेने होते हैं, जो बिजली आधारित हैं। त्रासदीपूर्ण यह है कि 4-6 घंटे की यह बिजली लगातार नहीं, बल्कि टुकड़ों में आती है। ऊपर से निमाड़ की जानलेवा गर्मी, उफ् ! इन दिनों कोई वहां चला जाए, तो यकीनन ताजिंदगी वहां जाने का नाम न ले। कैसे वे लोग रातें जाग-जागकर बिताते हैं, इसका अनुमान नबआ और पर्यावरण मंत्रालय को हो ही नहीं सकता। दरअसल, अब यह एक मजाक-सा बन गया है कि पर्यावरण के नाम पर कोई भी आंदोलन छेड़ा जाए, तो सरकार अपनी चेतना-जागरूकता दिखाने के लिए कार्रवाई कर डालती है। केंद्र सरकार के पर्यावरण मंत्रालय ने इस बार भी यही किया। नबआ के कुछ लोग दिल्ली गए और धरना क्या दिया, मंत्रालय ने तत्काल प्रभाव से महेश्वर परियोजना का काम रुकवा दिया। लोगों को इससे कोई सरोकार ही नहीं कि एक बार वे प्रदेश के अधिकारियों से चर्चा करके वस्तुस्थिति तो समझ लेते कि पुनर्वास कार्य कितना हुआ है।

उन्हें इससे कोई मतलब नहीं था कि इसी महेश्वर परियोजना से इंदौर-देवास को नर्मदा के तीसरे चरण का 36 करोड़ लीटर पानी मिलना है। जब तक इसके गेट लगा नहीं दिए जाते, तब तक पानी देना संभव ही नहीं। इस बार मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने तत्काल पहल करते हुए प्रधानमंत्री से हस्तक्षेप करने को कहा। वे जानते थे कि इस परियोजना में देरी निमाड़ और इंदौर, दोनों का जबर्दस्त नुकसान करेगी। फिर वे नबआ की दादागीरी पर अंकुश भी चाहते थे। यह संदेश देना जरूरी हो गया था कि वे कभी भी दिल्ली जाकर भले ही धरना-प्रदर्शन करे लें व अपनी नाजायज मांगें मनवा लें, तो भी प्रदेश सरकार उनके दबाव में नहीं आएगी। इस बार ऐसा ही हुआ। जहां शिवराज सिंह चौहान ने प्रधानमंत्री से बात की, वहीं मुख्य सचिव ने प्रधानमंत्री के प्रधान सचिव से तथ्यों और हकीकत को सामने रखकर बात की और नतीजा सामने है।

फिलहाल गेट लगाने की अनुमति दे दी गई है, जो बेहद जरूरी भी थी। गेट लगाए बिना बांध में पानी रोकना संभव नहीं और न ही उसके बिना इंदौर को नर्मदा के तीसरे चरण का पानी मिल सकता है। वैसे भी, सन-1997 में महेश्वर बांध का काम शुरू हुआ था और पांच से सात वर्ष में यह काम पूरा हो जाना था। अधिकतम 2005 में भी यदि बांध अपना काम शुरू कर देता, तो अब तक इंदौर-देवास और निमाडवासियों को कितना लाभ पहुंचता, जरा सोचिए।

नजरिया

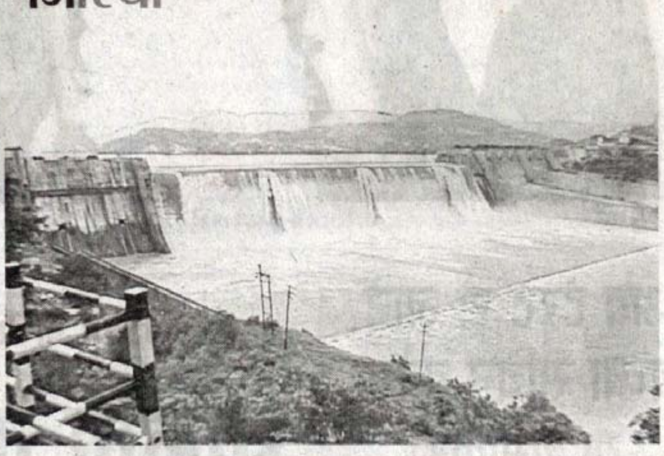

करीब 700 करोड़ की लागत वाली परियोजना अब 2500 करोड़ रुपए से अधिक की हो चुकी है। इस दरम्यान बार-बार आंदोलन और अवरोध के कारण जहां इसकी लागत बेतहाशा बढ़ गई, वहीं विदेशी निवेशकर्ता भी बिदककर भाग गए। बावजूद इसके परियोजना का 95 प्रतिशत काम पूरा हो चुका है। कुल 13 गांव आंशिक डूब में आने वाले हैं। इनमें से आठ गांवों में पुनर्वास की प्रक्रिया पूरी कर ली गई है। शेष रहे गांवों में यदि दिक्कत आ रही है, तो उसका कारण नबआ के कार्यकर्ता हैं।

लोग भूले नहीं होंगे कि किस तरह इन लोगों ने शुरुआती दौर में सरकारी अधिकारियों के साथ मारपीट करना, उनका मुंह काला करके जुलूस निकालना, उन्हें गांव में न घुसने देना, जैसी तमाम करतूतें की थीं। महेश्वर परियोजना में डूब प्रभावित 13 गांवों में अब भी वे यही सब हरकतें कर रहे हैं और दिल्ली जाकर यह दर्शाते हैं कि वहां पुनर्वास कार्य नहीं किया जा रहा है। जब आप गांवों में किसी को घुसने ही नहीं दे रहे, तब पुनर्वास कैसे हो सकता है? इसमें करीब 873 हेक्टेयर खेती की जमीन डूब में आनी है। ज्यादातर किसान अपनी जमीन बेचकर जा चुके हैं, वह भी ऊंचे दामों पर। यह जमीन अभी डूब में नहीं है। इस वक्त जो स्थिति परियोजना की है, उस दशा में पूरी तरह काम बंद कर देना किसी भी रूप में समझदारी नहीं कही जा सकती। अब जो भी नुकसान होगा, वह इस देश का, इसकी अवाम का नुकसान होगा।

अब तो सिर्फ यह देखा जाना चाहिए कि किस तरह पुनर्वास का काम तेजी से हो और पूरे मानदंडों के अनुसार। इसकी देख-रेख किसी सक्षम एजेंसी से कराई जा सकती है। जिस परियोजना का काम 95 प्रतिशत पूरा हो चुका हो, उसे न तो पर्यावरण के नाम पर और न पुनर्वास के मुद्दे पर रोका जाना चाहिए। यदि हो सके, तो इस बारे में कोई नीति ही बना ली जाए कि किसी भी परियोजना का 60 प्रतिशत काम हो जाने पर उसका काम रोका नहीं जा सकता। आखिरकार किसी भी योजना को अनुमति सरकारें ही देती हैं। तब क्या वे यह तय नहीं कर सकतीं कि किस चरण में कौन-सा काम हो जाना चाहिए और वैसा न होने पर काम रोक देना होगा। किसी दबाव में कि योजना को रोक देना, धन की बर्बादी तो है ही, परियोजना के लाभों को दूर धकेलना भी है। अब इस बारे में एक निश्चित नीति और कार्ययोजना भी बननी ही चाहिए।

■ रमण रावल